हिन्दी उपन्यास साहित्य में किन्नर विमर्श

नीलांबिके पाटील*

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.19501747

ABSTRACT

समकालीन समाज का दर्पण है आज का साहित्य। हमारा देश विश्व में सबसे बड़ा प्रजातांत्रिक देश है। यहाँ कई समुदाय के लोग निवास करते हैं। समुदाय का अर्थ एक ऐसे समूह से है जहाँ लोग निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में एक साथ रहते हैं। आपस में सामाजिक संबंध रखते हैं उनमें 'हम' की भावना (सामुदायिक भावना) होती है। उनकी एक जैसी संस्कृति एक जैसा रहन-सहन, खान-पान, भाषा-बोली, वेश-भूषा होती है। अपनी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति समुदाय के भीतर ही पूरी कर लेते हैं। ये लोग अपने समुदाय के प्रति वफादार होते हैं और सामुदायिक नियमों का परिपालन भी करते हैं। भारतीय समाज में सभी समुदायों की स्थिति एक जैसी नहीं होती है। आज भी वर्ग और वर्ण के आधार पर समुदायों की स्थिति एक जैसी नहीं होती है। आज भी वर्ग और वर्ण के आधार पर समुदायों का विभाजन किया जाता है। यह सामान्य जीवन साझा संस्कृति और सहयोग पर आधारित होता है।

हिन्दी उपन्यास आधुनिक गद्य साहित्य की एक प्रमुख विधा है, जिसमें जीवन की व्यापकता और जटिलता को अभिव्यक्त करने की क्षमता है। आधुनिकता और उत्तर आधुनिकता के दौर में हिन्दी उपन्यास ने समाज के उन वर्गों को केंद्र में लाया है, जो लंबे समय तक हाशिए पर रहे। समकालीन हिन्दी उपन्यास साहित्य में उपेक्षित समुदाय जैसे-दलित, स्त्री-विमर्श, किन्नर एवं अन्य वंचित वर्ग के जीवन, संस्कृति और सामाजिक यथार्थ का सशक्त चित्रण हुआ है, जिसने साहित्य की दिशा को परिवर्तित किया।

KEYWORDS: समकालीन हिन्दी उपन्यास, सामाजिक यथार्थ, अस्मिता, किन्नर विमर्श।

* **डॉ. नीलांबिके पाटील**, सहायक अध्यापिका, हिंदी विभाग, कर्नाटक कला, वाणिज्य और विज्ञान महाविद्यालय, धारवाड़.

प्रस्तावना :

हिन्दी उपन्यास साहित्य भारतीय समाज के बहुवर्णी यथार्थ को अभिव्यक्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। विशेषत: आधुनिक और समकालीन साहित्य में महिला उपन्यासकारों ने उन वर्गों की ओर ध्यान केंद्रित किया, जिन्हें लंबे समय तक सामाजिक संरचना में हाशिए पर रखा गया। इक्कीसवीं सदी में नये-नये विमर्शों का जन्म हुआ है। इन महिला उपन्यासकारों ने भी नये-नये विषयों को लेकर लिखना शुरू किया। इस सदी के उपन्यासों में बेझिझक समाज का नग्न चित्रण तथा सभी विमर्शों पर उपन्यास लिखे गए। विशेष रूप से समकालीन साहित्य में उपन्यासकारों ने उस वर्ग की ओर अपना ध्यान केंद्रित किया है, जो लंबे समय तक सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक दृष्टि से उपेक्षित रहे। किन्नर समुदाय जिसे ट्रांसजेंडर या तृतीय लिंगी भी कहा जाता है। भारतीय समाज में किन्नरों को प्राय: धार्मिक और सांस्कृतिक अवसरों (जन्म, विवाह आदि) तक सीमित कर दिया गया है।

इक्कीसवीं सदी के आरंभ से हिन्दी उपन्यासों में किन्नर जीवन को केंद्र में लाने का प्रयास शुरू हुआ। नीरजा माधव का उपन्यास 'यमदीप' (2002) हिन्दी में किन्नर विषय पर पहला महत्वपूर्ण उपन्यास माना जाता है। इसके बाद कई उपन्यास प्रकाशित हुए, जिनमें किन्नर समुदाय के जीवन का विस्तृत चित्रण किया गया। इसके बाद समकालीन हिन्दी साहित्य में कई सारे उपन्यास लिखे गये, जो किन्नर जीवन को केंद्र में रखकर लिखे गए हैं। प्रदीप सौरभ द्वारा 'तीसरी ताली', चित्रा मुद्गल जी का 'पोस्ट बॉक्स नं.203, नाला सोपारा', महेंद्र भीष्म जी का 'किन्नर कथा', शरद सिंह जी का 'गुलाल मंडी', सुशील सिद्धार्थ का 'दरमियाना', नंदकिशोर आचार्य का 'मैं पायल' आदि। इन उपन्यासों में किन्नर जीवन के विविध आयामों - जन्म, परिवार से बहिष्कार, गुरु-चेले की परम्परा, हिंसा, प्रेम, संघर्ष, यौन शोषण, पहचान आदि का चित्रण किया गया है। हिन्दी साहित्य में किन्नर समुदाय का चित्रण अपेक्षाकृत नवीन प्रवृत्ति है, जो विशेष रूप से उत्तर-आधुनिक और समकालीन काल में विकसित हुई है। अब उन्हें केंद्रीय स्थान दिया गया है।

भारतीय समाज में किन्नर समुदाय की स्थिति अत्यंत जटिल रही है। एक ओर धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं में किन्नरों को विशेष स्थान दिया गया है जैसे- जन्म, विवाह आदि अवसरों पर उनके आशीर्वाद को शुभ माना जाता है वहीं दूसरी ओर सामाजिक जीवन में उन्हें बहिष्कार, उपेक्षा और अपमान का सामना करना पड़ता है। इस दुविधापूर्ण स्थिति का चित्रण हिन्दी उपन्यासों में अत्यंत मार्मिकता के साथ हुआ है। उपन्यासकारों ने यह दिखाया है कि किन्नर समुदाय को परिवार से अलग कर दिया जाता है, जिससे वे अपनी पहचान और अस्तित्व के संकट से जूझते हैं। यह सामाजिक बहिष्कार उनके जीवन को न केवल आर्थिक रूप से कमजोर बनाता है, बल्कि मानसिक और भावनात्मक स्तर पर भी गहरा प्रभाव डालता है। किन्नर समाज की अपनी एक

विशिष्ट संस्कृति होती है। उपन्यासों में यह दिखाया गया है कि किन्नर समुदाय अपने भीतर एक वैकल्पिक परिवार का निर्माण करता है, जहाँ गुरु को माता-पिता के समान सम्मान दिया जाता है और शिष्य उसके संरक्षण में जीवन व्यतीत करते हैं। यह संरचना न केवल सामाजिक सुरक्षा प्रदान करती है, बल्कि एक सांस्कृतिक पहचान भी निर्मित करती है। उनके पहनावे, भाषा, नृत्य और संगीत में भी उनकी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान परिलक्षित होती है जिसे हिन्दी उपन्यासों में संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया गया है। किन्नर समुदाय के सामाजिक यथार्थ का एक महत्त्वपूर्ण पहलू उनकी पहचान का संकट है। हिन्दी उपन्यासों में लेखकों द्वारा यह प्रश्न बार-बार उठाया गया है कि किन्नर व्यक्ति अपनी पहचान को कैसे परिभाषित करे-क्या वह पुरुष है, स्त्री है या कुछ और? यह प्रश्न केवल जैविक नहीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक भी है।

समकालीन हिन्दी उपन्यासों में किन्नर समुदाय के जीवन का चित्रण करते हुए लेखकों ने उनके संघर्ष तथा प्रतिरोध को भी प्रमुखता से प्रस्तुत किया है। 'तीसरी ताली' जैसे उपन्यासों में किन्नर समुदाय के जीवन का अत्यंत यथार्थवादी और गहन चित्रण मिलता है। इस उपन्यास में किन्नर समाज की आंतरिक संरचना, उनके संबंध, संघर्ष और सामाजिक स्थिति को विस्तार से प्रस्तुत किया है। किन्नर समुदाय केवल बाहरी समाज द्वारा ही नहीं, बल्कि कभी-कभी अपने भीतर भी शोषण और असमानता का सामना करता है। इसी प्रकार 'पोस्ट बॉक्स नं.203, नाला सोपारा' उपन्यास में शहरी परिवेश में किन्नर समुदाय के जीवन का चित्रण किया गया है। इस उपन्यास में किन्नर पात्रों के माध्यम से महानगरीय जीवन की संवेदनहीनता, सामाजिक दूरी और मानवीय संबंधों की जटिलता को दर्शाया गया है। इस उपन्यास की विशेषता इसकी संवेदनात्मक गहराई है। जहाँ किन्नर पात्र केवल एक सामाजिक समस्या नहीं बल्कि मानवीय भावनाओं से युक्त व्यक्तित्व के रूप में उभरते हैं। 'किन्नर कथा' उपन्यास में महेंद्र भीष्म ने यह दिखाया है कि किस प्रकार किन्नर समाज अपनी परंपराओं को बनाए रखते हुए आधुनिक समाज में अपनी पहचान स्थापित करने का प्रयास करता है। इसमें किन्नरों के सामाजिक बहिष्कार, आर्थिक कठिनाइयों और आत्मसम्मान के संघर्ष का मार्मिक चित्रण किया गया है। 'मैं पायल' नामक उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है, जिसमें एक किन्नर व्यक्ति के जीवन की वास्तविकता जैसे सामाजिक बहिष्कार, परिवार से अलगाव और किन्नर समुदाय में प्रवेश तक की यात्रा का वर्णन है। इसमें महेंद्र भीष्म जी ने किन्नर जीवन की पीड़ा, संघर्ष और आत्मनिर्भरता की आकांक्षा को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। 'दरमियाना' सुशील सिद्धार्थ के उपन्यास में यह शब्द ही इस समुदाय की स्थिति को दर्शाता है जो न पूरी तरह पुरुष है और न स्त्री। यह उपन्यास किन्नर जीवन की त्रासदी, उनके संघर्ष और संवेदनाओं पर आधारित है। इसी तरह समकालीन हिंदी साहित्य में कई अन्य रचनाएँ हैं, जिनमें किन्नर समुदाय का चित्रण विभिन्न रूपों में किया गया है, जैसे कि किन्नर पात्र अपनी पहचान, अस्मिता को स्थापित करने के

लिए संघर्ष करते हैं। इनको समाज द्वारा अस्वीकार किया गया है, आर्थिक संघर्ष करते हुए दिखाई देते हैं।

समकालीन हिन्दी उपन्यासों में किन्नर समुदाय के जीवन का चित्रण करते हुए उपन्यासकारों ने उनके संघर्ष और प्रतिरोध को भी प्रमुखता से प्रस्तुत किया है। यह प्रतिरोध केवल बाहरी समाज के विरुद्ध ही नहीं, बल्कि अपने भीतर की कमजोरियों और सीमाओं के विरुद्ध भी होता है। कई उपन्यासों में किन्नर पात्र शिक्षा, रोजगार और सामाजिक स्वीकृति के लिए संघर्ष करते हुए दिखाई देते हैं। वे अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होते हैं और समाज में समानता और सम्मान की माँग करते हैं। इस प्रकार किन्नर समुदाय का चित्रण केवल पीड़ा और उपेक्षा तक सीमित नहीं रहता, बल्कि उसमें संघर्ष, आत्मसम्मान और परिवर्तन की आकांक्षा भी शामिल होती है।

आधुनिक समय में किन्नर समुदाय के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में कुछ सकारात्मक परिवर्तन भी देखने को मिलते हैं। भारतीय न्यायपालिका द्वारा अब तीसरे लिंग को मान्यता दिये जाने पर किन्नर समुदाय के अधिकारों और पहचान को कानूनी आधार मिला है। इस परिवर्तन का प्रभाव हिन्दी उपन्यासों में भी दिखाई देता है। किन्नर पात्र अब अधिक सशक्त और जागरूक रूप में प्रस्तुत किये जा रहे हैं। वे केवल सहानुभूति के पात्र नहीं अपितु अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करनेवाले सक्रिय व्यक्तित्व के रूप में उभर रहे हैं। उपन्यासकार इस परिवर्तन को सकारात्मक रूप में देखते हैं, लेकिन सामाजिक स्तर पर अभी भी बहुत कुछ बदलना बाकी है।

हिन्दी उपन्यास साहित्य में किन्नर समुदाय का चित्रण सामाजिक यथार्थ और सांस्कृतिक विविधता को समझने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। समकालीन उपन्यासों ने इस समुदाय को न केवल विषय के रूप में प्रस्तुत किया है, बल्कि उनकी आवाज को भी अभिव्यक्ति दी है। इन उपन्यासों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि किन्नर समुदाय केवल एक सामाजिक वर्ग नहीं, अपितु एक जीवंत सांस्कृतिक, संघर्षशील जीवन तथा सशक्त अस्मिता का प्रतीक है। यह साहित्य समाज में समानता, समावेशिता और मानवीय गरिमा की स्थापना की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। फिर भी अधिकांश किन्नर पारंपरिक रूप से नृत्य-गायन, बधाई माँगने या भीख माँगने जैसे कार्यों पर निर्भर रहते हैं। आधुनिक शिक्षा और रोजगार के अवसरों से वंचित रहने के कारण वे मुख्यधारा के आर्थिक जीवन में शामिल नहीं हो पाते। उपन्यासकारों ने इस स्थिति को केवल एक सामाजिक समस्या के रूप में नहीं बल्कि एक संरचनात्मक असमानता के रूप में प्रस्तुत किया है, जो समाज की नीतियों और दृष्टिकोण का परिणाम है। समकालीन साहित्य ने किन्नर समुदाय को केवल विषय के रूप में नहीं बल्कि स्वर के रूप में स्थापित करने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया है। यह साहित्य सामाजिक समावेशिता, समानता और मानवीय गरिमा की स्थापना में सहायक सिद्ध होता है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. साहित्यिक निबंध - गणपतिचंद्र गुप्त, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1999
2. भारतीय संस्कृति- डॉ.राजकिशोर सिंह, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
3. हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद - डॉ.त्रिभुवन सिंह, हिन्दी प्रचार पुस्तकालय, वाराणसी, 2018
4. यमदीप - नीरजा माधव, सुशील साहित्य सदन, नई दिल्ली
5. पोस्ट बॉक्स नं.203, नाला सोपारा - चित्रा मुद्गल, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली
6. गुलाम मंडी - निर्मला भूराडिया, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली
7. तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
8. मैं पायल - महेंद्र भीष्म, अमन प्रकाशन, कानपुर